IOSR Journal Of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 31, Issue 2, Series 3 (February, 2026) 04-07
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

भारतीय जीवन-दृष्टि का दार्शनिक विमर्श: हिन्दू अध्ययन के आलोक में धर्म

डॉ. गायत्री शर्मा
सहायक प्राध्यापक (हिंदी)
चमेली देवी इंस्टिट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज़, इंदौर (म.प्र.)

सार (Abstract)
भारतीय सभ्यता की बौद्धिक और सांस्कृतिक परंपरा का मूल आधार "धर्म" की अवधारणा है, जो केवल धार्मिक आस्था या कर्मकांड तक सीमित न होकर मानव जीवन की समग्र दार्शनिक संरचना का प्रतिनिधित्व करती है। हिन्दू अध्ययन (Hindu Studies) एक उभरता हुआ बहुविषयी अकादमिक क्षेत्र है, जो भारतीय दर्शन, समाज, संस्कृति और इतिहास को समन्वित दृष्टि से समझने का प्रयास करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय जीवन-दृष्टि में निहित धर्म की दार्शनिक व्याख्या करना तथा यह स्पष्ट करना है कि हिन्दू अध्ययन किस प्रकार इस परंपरा को वैश्विक बौद्धिक विमर्श से जोड़ता है।
यह अध्ययन गुणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है, जिसमें वैदिक संहिताओं, उपनिषदों, भगवद्गीता, स्मृतियों, पुराणों तथा आधुनिक विद्वानों के ग्रंथों का विश्लेषण किया गया है। शोध यह प्रतिपादित करता है कि धर्म केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि कर्तव्य, करुणा, सह-अस्तित्व, संतुलन और आत्म-बोध से जुड़ी जीवन-दृष्टि है।
मुख्य शब्द: *धर्म, हिन्दू अध्ययन, भारतीय जीवन-दृष्टि, दर्शन, संस्कृति, नैतिकता, वैश्विक विमर्श।*

Date of Submission: 04-02-2026 Date of Acceptance: 14-02-2026

I. भूमिका (Introduction)

भारतीय सभ्यता विश्व की उन कुछ सभ्यताओं में से है जिनकी परंपरा निरंतर प्रवाह में रही है। इस सभ्यता की आत्मा "धर्म" की अवधारणा में निहित है, जो केवल धार्मिक आस्था या कर्मकांड तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन के प्रत्येक पक्ष को संतुलित करने वाली एक व्यापक दार्शनिक दृष्टि है। भारतीय जीवन-दृष्टि में धर्म को सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक और पर्यावरणीय संदर्भों में देखा गया है।

हिन्दू अध्ययन (Hindu Studies) एक बहुविषयी अकादमिक क्षेत्र है, जो भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति और समाज को ऐतिहासिक तथा समकालीन दोनों दृष्टियों से समझने का प्रयास करता है। आधुनिक वैश्विक संदर्भों में यह अनुशासन केवल परंपरा का अध्ययन नहीं करता, बल्कि उसे पुनर्पाठ (reinterpretation) के माध्यम से वर्तमान मानवीय समस्याओं से जोड़ता है।

आज की वैश्विक दुनिया जिन संकटों से जूझ रही है—जैसे नैतिक पतन, सांस्कृतिक विघटन, पर्यावरणीय असंतुलन और पहचान का संकट—उनके समाधान के लिए भारतीय जीवन-दृष्टि एक वैकल्पिक और समावेशी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। यही इस शोध का मूल आधार है।

II. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

भारतीय दर्शन में धर्म की अवधारणा पर प्राचीन एवं आधुनिक विद्वानों ने गहन विचार किया है। वैदिक युग से लेकर आधुनिक अकादमिक विमर्श तक, धर्म को केवल आस्था या पूजा-पद्धति के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन के मूलाधार के रूप में देखा गया है।

राधाकृष्णन (2007) के अनुसार भारतीय दर्शन "जीवन की व्याख्या" है, न कि केवल बौद्धिक तर्क। वे धर्म को ऐसी चेतना मानते हैं, जो व्यक्ति को आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाती है। दासगुप्ता (2009) भी यह स्वीकार करते हैं कि भारतीय परंपरा में धर्म को ब्रह्मांडीय व्यवस्था से जोड़ा गया है, जिसे वैदिक ग्रंथों में ऋत कहा गया है।

हिन्दू अध्ययन के आधुनिक विद्वान Flood (1996) और Michaels (2004) धर्म को एक सांस्कृतिक प्रणाली के रूप में देखते हैं, जिसमें अनुष्ठान, प्रतीक, दर्शन और सामाजिक संरचना सम्मिलित हैं। इनके अनुसार, हिन्दू अध्ययन धर्म को "स्थिर परंपरा" नहीं, बल्कि "गतिशील विमर्श" के रूप में प्रस्तुत करता है।

इस प्रकार, पूर्ववर्ती शोध यह स्पष्ट करते हैं कि धर्म भारतीय जीवन-दृष्टि का केवल आध्यात्मिक पक्ष नहीं, बल्कि सामाजिक और वैश्विक विमर्श का भी महत्वपूर्ण घटक है।

III. शोध-पद्धति (Research Methodology)

यह अध्ययन गुणात्मक, व्याख्यात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें निम्न चरण अपनाए गए हैं—

1. **ग्रंथीय विश्लेषण** – वैदिक संहिताएँ, उपनिषद, भगवद्गीता, मनुस्मृति, पुराण।
2. **तुलनात्मक अध्ययन** – भारतीय और पाश्चात्य दार्शनिक दृष्टियों की तुलना।
3. **विषयवस्तु विश्लेषण (Thematic Analysis)** – धर्म, कर्तव्य, नैतिकता, सह-अस्तित्व, पर्यावरण।

यह पद्धति इसलिए चुनी गई है क्योंकि धर्म जैसी अवधारणा को मात्र संख्यात्मक आँकड़ों से नहीं, बल्कि दार्शनिक और सांस्कृतिक संदर्भों में समझा जा सकता है।

IV. धर्म की अवधारणा: दार्शनिक विवेचन (Concept Of Dharma: Philosophical Analysis)

धर्म भारतीय चिंतन की केंद्रीय धुरी है, जो केवल पूजा-पद्धति या धार्मिक संप्रदायों तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन के नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक समन्वय का व्यापक दर्शन प्रस्तुत करता है। संस्कृत परंपरा में "धर्म" शब्द *धृ* धातु से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है—"धारण करना" या "संभाल कर रखना।" इस प्रकार धर्म वह आधार है जो व्यक्ति, समाज और ब्रह्माण्ड को एक नैतिक संरचना में बाँधता है (Radhakrishnan, 2007)।

भारतीय दर्शन में धर्म को सार्वभौमिक नियम (cosmic order) के रूप में समझा गया है। ऋग्वेद में 'ऋत' की संकल्पना इसी नैतिक और प्राकृतिक व्यवस्था की ओर संकेत करती है, जो सृष्टि को संतुलित रखती है (Flood, 1996)। आगे चलकर यही 'ऋत' उपनिषदों और स्मृतियों में 'धर्म' के रूप में विकसित हुआ। मनुस्मृति में धर्म को सामाजिक स्थिरता और नैतिक अनुशासन का आधार बताया गया है (Michaels, 2004)।

उपनिषदों में धर्म को आत्मज्ञान से जोड़ा गया है। वहाँ कहा गया है कि जब मनुष्य अपने सत्य स्वरूप को पहचानता है, तब उसका आचरण स्वतः धर्ममय हो जाता है (Dasgupta, 2009)। इसी संदर्भ में गीता कर्मयोग का सिद्धांत प्रस्तुत करती है—

"योगस्थः कुरु कर्माणि, संगं त्यक्त्वा धनंजय।" ***अर्थ:*** आसक्ति त्यागकर समभाव से कर्म करना ही धर्म है (Bhagavad Gita 2.48)।

यहाँ धर्म को कर्म से विमुख होने का मार्ग नहीं, बल्कि लोक-कल्याण की सक्रिय साधना माना गया है (Radhakrishnan, 2007)।

हिन्दू अध्ययन के आलोक में धर्म एक बहुआयामी संकल्पना बनकर उभरता है—जहाँ वह व्यक्तिगत नैतिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक मुक्ति के बीच सेतु का कार्य करता है। आधुनिक विद्वान भी धर्म को केवल आस्था नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विवेक और नैतिक विवेचन का आधार मानते हैं (Michaels, 2004; Flood, 1996)।

समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में धर्म की यह व्यापक समझ मानवता को भौतिकता से ऊपर उठाकर करुणा, सह-अस्तित्व और शांति की ओर उन्मुख कर सकती है। इस प्रकार धर्म भारतीय जीवन-दृष्टि का वह प्रकाशस्तम्भ है, जो अतीत की परंपरा को भविष्य की चेतना से जोड़ता है।

V. भारतीय जीवन-दृष्टि: दार्शनिक आधार (Indian Worldview: Philosophical Foundations)

भारतीय जीवन-दृष्टि केवल जीवन जीने की शैली नहीं, बल्कि एक समग्र दार्शनिक चेतना है, जिसमें भौतिक, नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक सभी आयाम एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। यह दृष्टि जीवन को संघर्ष या उपभोग का साधन नहीं, बल्कि आत्म-विकास और लोक-कल्याण की साधना मानती है। भारतीय दर्शन में जीवन का उद्देश्य केवल सुख-प्राप्ति नहीं, बल्कि पुरुषार्थ-चतुष्टय—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—की संतुलित प्राप्ति है (Radhakrishnan, 2007)।

भारतीय परंपरा में मनुष्य को केवल जैविक सत्ता नहीं, बल्कि चेतन, नैतिक और आध्यात्मिक सत्ता के रूप में देखा गया है। उपनिषदों में कहा गया है—

"अयमात्मा ब्रह्म।" ***अर्थ:*** यह आत्मा ही ब्रह्म है।

यह कथन भारतीय जीवन-दृष्टि की मूल आत्मा को प्रकट करता है—मनुष्य और ब्रह्माण्ड के बीच अद्वैत संबंध। यह दृष्टि भेद नहीं, बल्कि एकत्व का अनुभव कराती है, जिससे सह-अस्तित्व और करुणा का भाव विकसित होता है (Dasgupta, 2009)।

भारतीय जीवन-दृष्टि में "वसुधैव कुटुम्बकम्" की अवधारणा समस्त मानवता को एक परिवार मानने की प्रेरणा देती है। यह भावना सामाजिक समरसता, वैश्विक शांति और सांस्कृतिक सहिष्णुता की आधारशिला है (Michaels, 2004)। यहाँ व्यक्ति को केवल अधिकारों से नहीं, बल्कि कर्तव्यों से भी बाँधा गया है, जिससे समाज में संतुलन और नैतिकता बनी रहती है।

भौतिक प्रगति को भारतीय दृष्टि नकारती नहीं, परंतु उसे आत्मिक मूल्यों के अधीन रखती है। यही कारण है कि यहाँ ज्ञान, त्याग, सेवा और संयम को सर्वोच्च गुण माना गया है। गीता में कहा गया है—

"न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।" ***अर्थ:*** कर्म के त्याग से नहीं, बल्कि निष्काम कर्म से ही मुक्ति संभव है।

यह कर्मयोग भारतीय जीवन-दृष्टि को सक्रिय, उत्तरदायी और लोक-कल्याणकारी बनाता है (Flood, 1996)।

आधुनिक वैश्विक संकट—एकाकीपन, हिंसा, उपभोक्तावाद और पर्यावरणीय विनाश—के बीच भारतीय जीवन-दृष्टि मानवता को पुनः संतुलन और अर्थबोध प्रदान कर सकती है। यह दृष्टि मनुष्य को प्रकृति, समाज और स्वयं से जोड़कर एक समग्र, नैतिक और शाश्वत जीवन-पथ का निर्माण करती है (Radhakrishnan, 2007)।

VI. धर्म, नैतिकता और समाज (Dharma, Ethics And Society)

भारतीय परंपरा में धर्म को सामाजिक जीवन की आत्मा माना गया है। यह केवल व्यक्तिगत आचरण तक सीमित नहीं, बल्कि समाज की नैतिक संरचना और सामूहिक चेतना का आधार है। धर्म व्यक्ति को कर्तव्य, करुणा, सत्य और सह-अस्तित्व जैसे मूल्यों से जोड़ता है, जो किसी भी स्वस्थ समाज की नींव होते हैं (Radhakrishnan, 2007)।

भारतीय दृष्टि में सामाजिक व्यवस्था केवल विधिक नियमों से नहीं, बल्कि नैतिक उत्तरदायित्व से संचालित होती है। मनुस्मृति में कहा गया है—

"धर्मो रक्षति रक्षितः।" ***अर्थ:*** जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है।

यह कथन यह स्पष्ट करता है कि धर्म और समाज का संबंध परस्पर पोषक है। जब व्यक्ति धर्म के मूल्यों का पालन करता है, तो समाज में न्याय, समरसता और विश्वास का वातावरण निर्मित होता है (Dasgupta, 2009)।

समकालीन समाज में, जहाँ भौतिक सफलता को जीवन का एकमात्र लक्ष्य मान लिया गया है, वहाँ नैतिक मूल्य गौण होते जा रहे हैं। परिणामस्वरूप सामाजिक संबंधों में स्वार्थ, हिंसा और असहिष्णुता बढ़ रही है। इस संदर्भ में भारतीय धर्म-दृष्टि "अहिंसा", "सत्य" और "सेवा" जैसे आदर्शों के माध्यम से सामाजिक पुनर्निर्माण का मार्ग प्रस्तुत करती है (Michaels, 2004)।

अतः धर्म को एक नैतिक शक्ति के रूप में समझना आवश्यक है, जो समाज को केवल व्यवस्थित ही नहीं, बल्कि मानवीय और करुणामय बनाती है।

VII. धर्म और पर्यावरण : सह-अस्तित्व का दर्शन (Dharma And Environment: A Philosophy Of Co-Existence)

भारतीय दर्शन में प्रकृति को केवल भौतिक संसाधन नहीं, बल्कि जीवंत सत्ता माना गया है। अथर्ववेद में कहा गया है—

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।" ***अर्थ:*** पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।

यह दृष्टि मानव और प्रकृति के संबंध को पवित्र और पारस्परिक बनाती है। भारतीय परंपरा में पंचतत्व—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—को जीवन का आधार माना गया है। ये केवल प्राकृतिक तत्त्व नहीं, बल्कि दार्शनिक और आध्यात्मिक प्रतीक भी हैं (Flood, 1996)।

आधुनिक युग में औद्योगिकीकरण, उपभोक्तावाद और अंधाधुंध विकास ने पर्यावरण को गंभीर संकट में डाल दिया है। इसके विपरीत, भारतीय धर्म-दृष्टि प्रकृति के साथ संतुलन और संयम का संदेश देती है। यह दृष्टि सतत विकास (sustainable development) की अवधारणा के साथ गहन साम्य रखती है (Dasgupta, 2009)।

आज जब वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन और पारिस्थितिक असंतुलन चिंता का विषय बन चुके हैं, तब भारतीय धर्म-दृष्टि एक पर्यावरणीय नैतिकता का आधार प्रस्तुत करती है, जो मानव को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि संरक्षक मानती है (Radhakrishnan, 2007)।

इस प्रकार, धर्म और पर्यावरण का संबंध केवल धार्मिक नहीं, बल्कि वैश्विक मानवता के भविष्य से जुड़ा हुआ है।

VIII. समकालीन प्रासंगिकता: वैश्विक संदर्भ में हिन्दू अध्ययन (Contemporary Relevance: Hindu Studies In Global Context)

इक्कीसवीं शताब्दी का वैश्विक समाज तीव्र परिवर्तन, तकनीकी विस्तार और सांस्कृतिक जटिलताओं के दौर से गुजर रहा है। उपभोक्तावाद, भौतिक सफलता की अंधी दौड़, नैतिक मूल्यहीनता, मानसिक तनाव और पर्यावरणीय संकट ने मानव जीवन को गहरे असंतुलन की ओर धकेल दिया है। ऐसे समय में भारतीय जीवन-दृष्टि में निहित धर्म की दार्शनिक अवधारणा केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक मूल्यपरक वैकल्पिक दृष्टि प्रस्तुत करती है (Radhakrishnan, 2007)।

आधुनिक समाज में पहचान का संकट और सांस्कृतिक टकराव तेजी से बढ़ रहे हैं। व्यक्ति स्वयं को केवल आर्थिक इकाई के रूप में देखने लगा है, जिससे आत्म-बोध और सामाजिक उत्तरदायित्व क्षीण हो रहे हैं। भारतीय धर्म-दृष्टि "वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धांत के माध्यम से संपूर्ण मानवता को एक परिवार मानती है। यह दृष्टि वैश्विक बहुसंस्कृतिवाद को केवल सह-अस्तित्व नहीं, बल्कि संवेदनशील सह-संबंध में परिवर्तित करती है (Michaels, 2004)।

मानसिक तनाव, अवसाद और अकेलेपन की बढ़ती प्रवृत्ति आज की एक गंभीर वैश्विक समस्या बन चुकी है। इस संदर्भ में योग, ध्यान और आत्मचिंतन जैसी भारतीय साधनाएँ न केवल आध्यात्मिक अभ्यास हैं, बल्कि आधुनिक मनोविज्ञान द्वारा भी मान्यता प्राप्त मानसिक स्वास्थ्य के सशक्त उपाय बन चुकी हैं (Flood, 1996)। धर्म यहाँ बाह्य अनुशासन नहीं, बल्कि आंतरिक संतुलन का मार्ग है।

पर्यावरणीय संकट भी समकालीन विश्व की सबसे बड़ी चुनौती है। औद्योगिकीकरण और उपभोक्तावादी जीवनशैली ने प्रकृति के साथ मानव के संबंध को शोषणात्मक बना दिया है। इसके विपरीत, भारतीय धर्म-दृष्टि प्रकृति को माता के रूप में देखती है, जिससे पर्यावरण-नैतिकता का एक गहन आधार निर्मित होता है (Dasgupta, 2009)। यह दृष्टि सतत विकास और वैश्विक पर्यावरण नीति के लिए वैचारिक प्रेरणा प्रदान कर सकती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि हिन्दू अध्ययन के आलोक में धर्म की भारतीय अवधारणा आज केवल सांस्कृतिक धरोहर नहीं, बल्कि वैश्विक मानवता के लिए नैतिक पुनर्निर्माण और संतुलित जीवन का मार्गदर्शन है। परंपरा में निहित यह दर्शन समकालीन संकटों के समाधान हेतु एक समावेशी, करुणामय और सार्वभौमिक दृष्टि प्रस्तुत करता है (Radhakrishnan, 2007; Flood, 1996; Michaels, 2004)।

IX. निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत शोध-पत्र यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित करता है कि "धर्म" भारतीय जीवन-दृष्टि का केवल एक धार्मिक सिद्धांत नहीं, बल्कि एक समग्र दार्शनिक संरचना है, जो व्यक्ति, समाज और प्रकृति के बीच संतुलन स्थापित करती है। हिन्दू अध्ययन के आलोक में यह स्पष्ट हुआ है कि धर्म को कर्मकांड, संप्रदाय या आस्था तक सीमित करना उसकी मूल भावना को संकुचित करना है। वस्तुतः धर्म एक ऐसी जीवन-चेतना है, जो नैतिकता, करुणा, कर्तव्य, सह-अस्तित्व और आत्म-बोध को जीवन के केंद्र में प्रतिष्ठित करती है।

इस अध्ययन के माध्यम से यह भी सिद्ध होता है कि भारतीय जीवन-दृष्टि केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि एक जीवंत और गतिशील वैचारिक परंपरा है, जो प्रत्येक युग में मानव समाज के प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करने की क्षमता रखती है। वैदिक ऋत से लेकर उपनिषदिक आत्मबोध, गीता के निष्काम कर्म, और समकालीन वैश्विक विमर्श तक, धर्म निरंतर रूपांतरण के साथ मानवता के नैतिक पथ को आलोकित करता रहा है।

समकालीन विश्व जिन जटिल संकटों—जैसे मूल्य-विघटन, उपभोक्तावाद, सांस्कृतिक संघर्ष, मानसिक अशांति और पर्यावरणीय असंतुलन—से गुजर रहा है, उनके समाधान के लिए धर्म की भारतीय अवधारणा एक समावेशी, संतुलित और करुणामय दृष्टि प्रस्तुत करती है। यह दृष्टि न तो किसी एक समुदाय तक सीमित है, न ही किसी भौगोलिक सीमा में बँधी हुई है; बल्कि यह सम्पूर्ण मानवता के कल्याण का संदेश देती है।

अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि हिन्दू अध्ययन केवल एक अकादमिक अनुशासन नहीं, बल्कि एक वैचारिक सेतु है, जो परंपरा और आधुनिकता, पूर्व और पश्चिम, तथा आध्यात्मिकता और बौद्धिकता के बीच संवाद स्थापित करता है। धर्म, इस सेतु का आधार बनकर, मानव जीवन को उद्देश्य, अर्थ और संतुलन प्रदान करता है। इस प्रकार, भारतीय जीवन-दृष्टि में निहित धर्म की दार्शनिक चेतना आज भी उतनी ही प्रासंगिक, सार्थक और मार्गदर्शक है, जितनी प्राचीन काल में थी—और भविष्य में भी मानवता के लिए आशा का दीपक बनी रहेगी।